षट्त्रिंशिका या षट्त्रिंशतिका : एक अध्ययन

अनुपम जैन* एवं सुरेशचन्द्र अग्रवाल**

षट्त्रिंशिका या षट्त्रिंशतिका नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती (१०वीं श० ई०) के प्रसिद्ध ग्रन्थ "**त्रिलोकसार**" के टीकाकार माधवचन्द्र त्रैविद्य (१०-११वीं० श० ई०) की एक अज्ञात गणितीय कृति है। वस्तुतः लेखक ने इस कृति का प्रणयन प्रसिद्ध जैन गणितज्ञ महावीराचार्य (८५० ई० लगभग) कृत **गणितसार संग्रह** के आधार पर उसकी सामग्री के कुछ अंश में कतिपय नवीन सूत्र जोड़कर की है। प्रस्तुत लेख में हम इसी कृति के सन्दर्भ में चर्चा करेंगे।

१ ग्रन्थकार माधव चन्द्र त्रैवैद्य का परिचय—षट्त्रिंशिका या षट्त्रिंशतिका की पाण्डुलिपियों में आया निम्न उल्लेख इस कृति को माधवचन्द्र की रचना बताता है।

श्री वीतरागाय नमः ।छ। छत्तीस मेतेन सकल ८, भिन्न ८, भिन्न जाति ६, प्रकीर्णक १०, त्रैराशिक ४ इंत्ता छत्तीस में बुट्टु वीराचार्यरू पेल्हगणित वनु माधवचन्द्र त्रैविद्याचार्यारू शोध सिदरागि शोध्यसार संग्रहमेनिसिकोंबुटु।[1]

इससे स्पष्ट है कि इसकी रचना माधवचन्द्र त्रैविद्य ने विद्वान् (महा)वीराचार्य के (गणित) सार संग्रह को शोध कर शोध कर की थी।

जैन ग्रन्थों में माधवचन्द्र नाम के १०-११ व्यक्तियों के उल्लेख मिलते हैं। ९वीं से १३वीं शती ई० के मध्य हमें तीन ऐसे माधवचन्द्र मिलते हैं, जिसके साथ त्रैविद्य की उपाधि जुड़ी है। प्राचीन काल में सिद्धान्त, व्याकरण एवं न्याय इन तीनों विषयों पर समान अधिकार रखने वाले को त्रैविद्य की उपाधि दी जाती थी।

प्रथम माधव चन्द्र त्रैविद्य का उल्लेख करते हुए नेमिचन्द्र शास्त्री[2] ने लिखा है कि—

"प्रथम माधव चन्द्र त्रैविद्य वे हैं जिनके शिष्य नाग चन्द्रदेव के पुत्र मादेय सेन बोवेंको तोलपुरुष विक्रम शान्तर की रानी पालियबक ने अपनी माता की स्मृति में निर्मापित पालियक्क बसति के लिए दान दिया था।[3] Luice Rice ने इस प्रकरण से सम्बद्ध अभिलेख का समय लगभग ९५० ई० अनुमानित किया है किन्तु स्वयं तोलपुरुष विक्रम शान्तर का शिलालेख सन् ८९७ ई० का प्राप्त है।[4] अतः यह माधव चन्द्र त्रैविद्य लगभग ९०० ई. में हुये होंगे।"

---

*. व्याख्याता, गणित विभाग, शासकीय महाविद्यालय, ब्यावरा (राजगढ़) (भारत)

**. रीडर, गणित विभाग, मेडूगरी विश्वविद्यालय, मेडूगरी (नाईजीरिया)।

१. षट्त्रिंशिका—जयपुर पाण्डुलिपि—पत्र सं० ३९।
षट्त्रिंशतिका—कारंजा"—पत्र सं० ४६।

२. देखें सन्दर्भ—६, II, पृ० ३४, पृ० २८८.

३. एपिग्राफी कर्णाटिका, भाग-८, नागर—४५.

४. एपिग्राफी कर्णाटिका, भाग–८, नागर—६०.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूसरे माधव चन्द्र त्रैविद्य नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती के शिष्य हैं। दुर्गदेव ने श्री निवास राजा के शासन काल में रिष्टसमुच्चय की रचना कुम्भ नगर में की थी। दुर्गदेव ने अपने गुरु संयम सेन के साथ माधवचन्द्र का भी स्मरण किया है। उन्होंने लिखा है कि—

जयऊ जए जियमाणो संजमदेवो मुणीसरों इत्थ।
तहव हु संजम सेणो माहवचन्दो गुरू तह य॥[1]

अर्थात् संयम-देव के गुरु संयम सेन एवं संयमसेन के गुरु माधव चन्द्र बतलाये गये हैं। दुर्गदेव के गुरु का नाम संयमदेव था एवं उनका समय १०३२ ई० है। अतः माधवचन्द्र का समय इनसे लगभग ५० वर्ष पूर्व होना चाहिये। इस प्रकार माधवचन्द्र, नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती के शिष्य ही होने चाहिए।

नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती के शिष्य माधव चन्द्र त्रैविद्य ने अपने गुरु की आज्ञा से त्रिलोकसार में यत्र-तत्र अनेक गाथायें समाविष्ट की थी, यह तथ्य निम्न गाथा से स्पष्ट है।

गुरुणेमिचंद सम्मदकादियवगाहा जहिं तहिं रडया।
माहव चंदतिविज्जोणिय मणु सदणिज्ज मज्जेहिं॥[2]

तीसरे माधवचन्द्र त्रैविद्य मूलसंघ, क्राणूर गण, तिन्त्रिणी गच्छ के विद्वान् जैन मुनि चन्द्रसूरि के प्रशिष्य थे।[3] जैनशिलालेख संग्रह, तृतीय भाग के लेख नं० ४३१ में (इसको वि. स. १२५४ में उत्कीर्ण किया गया था) जिन सकलचन्द्र का उल्लेख किया है, उनके शिष्य हो ये माधवचन्द्र (त्रैविद्य) हैं। इन्होंने क्षुल्लकपुर (वर्तमान कोल्हापुर) में क्षपणासार गद्य की रचना की थी।[4]

माधव चन्द्र ने इस ग्रंथ की रचना शिलाधर कुल के राजा वीर भोजदेव के प्रधानमन्त्री बाहुबली के लिए की थी जिन्हें माधवचन्द्र ने भोजराज के समुद्धरण में समर्थ बाहुबलयुक्त, दानादि गुणोत्कृष्ट, महामात्य एवं लक्ष्मीवल्लभ बतलाया है।[5] इन्होंने १२०३ ई० में क्षपणासार गद्य की रचना की थी। यह तथ्य निम्न गाथा से स्पष्ट है :

अमुना माधव चन्द्र दिव्य गणिना, त्रैविद्यचक्रेशिना,
क्षपणा सारम करि बाहुबलि सन्मंत्री सज्ञप्तये॥
सकलकाले शर-सूर्य-चन्द्रगणिते जाते पुरे क्षुल्लके,
शुमदेदुन्दुभि वत्सेर विजय तामा चन्द्र ताव मुवि॥[6]

षट्त्रिंशिका के कर्ता माधवचन्द्र त्रैविद्य इन तीनों में से कौन से माधवचन्द्र हैं, यह निर्धारित करने हेतु कोई ठोस प्रमाण नहीं है। तथापि नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती के शिष्य माधवचन्द्र त्रैविद्य

---

१. रिष्टसमुच्चय—गोधा जैन ग्रन्थमाला, इन्दौर—पद्य—२५४. पृ० १६८
२. त्रिलोक सार, माणिक चन्द्र ग्रन्थमाला—१९१८।
३. सं० ७—I, पृ० ३९७।
४. वही, पृ० ३९७।
५. क्षपणासार गद्य प्रशस्ति—जैन ग्रन्थ प्रशस्ति संग्रह, भाग—१, पृ० १५५।
६. सं० ७—I, पृ० ३९७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रिलोकसार सदृश करणानुयोग के जटिल गणितीय प्रकरणों से समृद्ध ग्रंथ के टीकाकार होने के कारण लौकिक गणित में भी पर्याप्त रुचि रखते थे। इन्होंने जिस प्रकार त्रिलोकसार की टीका करते समय यत्र-तत्र अनेक गाथाओं को समाविष्ट किया है लगभग उसी प्रकार महावीराचार्य कृत गणितसारसंग्रह में से कुछ प्रकरण यथावत् लेकर एवं उसमें कुछ नवीन सामग्री जोड़कर षट्त्रिंशिका की रचना की गई है। फलतः यह अनुमान किया जा सकता है कि षट्त्रिंशिका के रचनाकार माधवचन्द्र त्रैविद्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती के शिष्य थे अर्थात् षट्त्रिंशिका के रचनाकार एवं त्रिलोकसार के टीकाकार से भिन्न हैं। इस दृष्टि से षट्त्रिंशिका का रचनाकाल १०-११ वीं श. ई. सिद्ध होता है।

षट्त्रिंशिका के उल्लेख —षट्त्रिंशिका का सर्वप्रथम उल्लेख महावीराचार्य की कृति के रूप में डा० कासलीवाल[1] ने किया था। उनकी सूची में दिया गया विवरण निम्न है :—

भंडार का नाम—श्री दि० जैन मन्दिर, ठोलियाँन, जयपुर।

४६८, षट्त्रिंशिका—महावीराचार्य, पत्र संख्या–४५, साईज ११" × ४$\frac{3}{4}$"

भाषा—संस्कृत, विषय—गणित, रचनाकाल— ×, लेखनकाल—विक्रमाब्द १६६५ आसाढ़ सुदी ८, पूर्ण, वेष्ठन संख्या ४६५।

४६९. प्रति नं. २, पत्र संख्या—१८, साइज—११ × ४$\frac{1}{2}$, लेखनकाल सं. १६३२ ज्येष्ठ सुदी–९,

विशेष—प्रति पर छत्तीसी टीका भी लिखी है।

कासलीवाल के उक्त विवरण के आधार पर १९६४ में मुकुट बिहारी लाल अग्रवाल ने अपने लेख में लिखा कि :—

"महावीराचार्य ने गणितसारसंग्रह के अतिरिक्त ज्योतिष पटल एवं षटत्रिंशिका आदि मौलिक एवं अभूतपूर्व ग्रन्थों की रचना की है जो कि ज्योतिष एवं गणित विषयवस्तु के कारण महत्त्वपूर्ण हैं।"

'गणितसारसंग्रह के अतिरिक्त षट्त्रिंशिका नामक पुस्तक का उल्लेख राजस्थान के जैन शास्त्र भंडारों की ग्रंथ सूची में मिलता है। इसकी २ प्रतियाँ हैं—प्रथम में ४५ पत्र हैं एवं दूसरी में १८ पत्र। ये दोनों प्रतियाँ जयपुर के ठोलियाँन मन्दिर में विद्यमान है तथा इसमें महावीराचार्य ने बीजगणित की ही चर्चा की है।[2]

१९६९ में अंबा लाल शाह ने अपनी पुस्तक[3] में इस कृति का उल्लेख ग्रंथ सूची के आधार पर किया है।

१९६४ में अपने लेख में इतनी महत्त्वपूर्ण सूचना देने के बाद १९७२ में प्रस्तुत अपने शोध प्रबन्ध में[4] अग्रवाल ने इसका कोई उल्लेख भी नहीं किया। वहां आपने केवल गणितसारसंग्रह को

१. देखें, सं०–८–I, पृ० १४८।
२. देखें, सं०–१–I, पृ० ४२, ४३।
३. देखें, सं०–१०–I, पृ० ६४।
४. देखें, सं०–१–II,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ही महावीराचार्य की कृति के रूप में उद्धृत किया। षट्त्रिंशिका का महावीराचार्य की कृति अथवा अन्य किसी रूप में कोई भी उल्लेख शोध प्रबन्ध में नहीं है।

१९७४ में राधाचरन गुप्त ने अग्रवाल के लेख[1] के Digest of Indological Studies में प्रकाशित सारांश (Abstract) के आधार पर निम्न उल्लेख किया था। 'The other is Saṭtrimśikā which is said to be devoted to Algebra[2] उन्होंने कृति को स्वयं न देखने का स्पष्ट उल्लेख किया है।

ज्योति प्रसाद जैन, नेमिचन्द्र जैन शास्त्री एवं परमानन्द जैन आदि विद्वानों ने इस कृति का अपनी कृतियों में कोई उल्लेख नहीं किया है। गणित इतिहास की पुस्तकों में भी इसका उल्लेख नहीं मिलता।

प्रतियों का विवरण एवं ग्रन्थ में निहित गणित :—देश के विविध शास्त्र भण्डारों में यद्यपि षट्त्रिंशिका की अनेक प्रतियाँ विद्यमान हैं तथापि उनका उल्लेख षट्त्रिंशिका के रूप में १-२ स्थानों पर ही है। ग्रन्थ के प्रारम्भ, मध्य की पुष्पिकाओं एवं विषयवस्तु के आधार पर ये प्रतियाँ प्रथम दृष्टि से सूचीकारों को गणितसारसंग्रह की अपूर्ण प्रति प्रतीत होती है। फलतः उन्होंने इसकी प्रतियों की गणितसार संग्रह की अपूर्ण प्रति के रूप में ही सूचीबद्ध किया है।[3] कारंजा में संग्रहीत २ ग्रन्थों के नाम "छत्तीसी गणित" एवं "षट्त्रिंशतिका" है। वस्तुतः ये दोनों षट्त्रिंशिका ही हैं। अन्य कई स्थानों पर गणितसारसंग्रह की अपूर्ण प्रतियों के होने की सूचना है वस्तुतः प्रतियों के देखे बिना यह कहना संभव नहीं है कि वे वास्तव में गणितसारसंग्रह की अपूर्ण प्रतियाँ हैं अथवा षट्त्रिंशिका की। इस भ्रान्ति की सीमा का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि सेन ने गणितसारसंग्रह की पाण्डुलिपियों के संदर्भ में सूचना संकलित करते हुए गणितसारसंग्रह का निम्न विवरण[4] दिया है।

MAHĀVĪRĀCĀRYA (C. 850 A. D.)

Gaṇita Sāra Saṃgraha, C. 850 A. D.

A Jaina work on Arithematic in 5 Chapters viz.

(i) Parikarmavidhi, (ii) Kalāsavarṇa vyavahāra, (iii) Prakīrṇaka vyavahāra, (iv) Trairāśika vyavahāra, (v) vargasaṃkalitānayana sūtra and Ghanasaṃkalitānayana sūtra.

स्पष्टतः उपरोक्त विवरण अशुद्ध है। वास्तव में यह विवरण षट्त्रिंशिका का है। गणितसार संग्रह में उपरोक्त प्रपत्र ४ के अतिरिक्त ४ और व्यवहार है जो क्रमशः मिश्रक व्यवहार, क्षेत्र गणित व्यवहार, खात व्यवहार एवं छाया व्यवहार है एवं उपरोक्त विवरण में से पाँचवा व्यवहार नहीं है।

---

१. Digest of Indological Studies, Vol-III, Port-2, Dec. 1965, PP. 622-623.

२. देखें, सं०–२–I, पृ० १७।

३. शीघ्र प्रकाश्य लेख—महावीराचार्य, व्यक्तित्व एवं कृतित्व।

४. देखें, सं०—९-१, पृ० १३२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिन्हें मिलाकर ८ अध्याय होते हैं[1] मुद्रित संस्करण में प्रथम व्यवहार के २ भाग होने के कारण ९ हैं।

अब हम क्रमिक रूप से इसकी विविध प्रतियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करेंगे।

जयपुर प्रति—कासलीवाल ने ४६८ एवं ४६९ नं० पर जिन दो प्रतियों को षट्त्रिंशिका माना है उनमें से प्रथम प्रति अर्थात् ४६८ ही षट्त्रिंशिका है, दूसरी नहीं। हम ४६८ क्रमांक वाली प्रति को जयपुर प्रति की संज्ञा देंगे।

इस प्रति में कुल ४५ पत्र हैं। ११" × ४$\frac{3}{4}$" के आधार के प्रत्येक पत्र पर ११ पंक्तियाँ हैं। सन् १६०८ में लिखी गई (रचना नहीं) इस प्रति की दशा सामान्य है। कतिपय पृष्ठों को छोड़कर शेष पत्रों के अक्षर स्पष्ट एवं पठनीय है। उपलब्ध प्रति का प्रारम्भ गणितसारसंग्रह के समान ही "अलघ्यं त्रिजगत्सारं....." आदि मंगलाचरण से हुआ है। किन्तु इससे पूर्व "(६०) श्री वीतरागाय नमः" लिखा है। मंगलाचरण के उपरांत संज्ञाधिकार यथावत् गणितसारसंग्रह के समान है[2]। अधिकार के अन्त में निम्न पुष्पिका है—"इति सारसंग्रहे गणितशास्त्रे महावीराचार्यस्य कृतो संज्ञाधिकारः समाप्तः।"

इसके उपरांत परिकर्म व्यवहार नामक दूसरा प्रकरण है। इस प्रकरण को षट्त्रिंशिका में प्रथम प्रकरण लिखा गया है, गणितसारसंग्रह में भी इस प्रकरण के अन्त में निम्न प्रकार पुष्पिका लिखी है—

"इति सारसंग्रह गणितशास्त्रे महावीराचार्यस्य कृतो परिकर्म नाम प्रथमः व्यवहारः समाप्तः।"

इस प्रकरण की सामग्री भी (गणित) सारसंग्रह के समान ही है, पुष्पिका भी उपरोक्त प्रकार से ही है।

तीसरा कला सवर्ण व्यवहार प्रकरण विषयवस्तु की दृष्टि से तो गणितसारसंग्रह के समान ही है किन्तु पुष्पिका एवं अन्त का कुछ अंश षट्त्रिंशिका की इस प्रति में नहीं है।[3] चतुर्थ एवं पंचम क्रमशः प्रकीर्णक एवं त्रैराशिक व्यवहार प्रकरण भी न्यूनाधिक पाठान्तरों सहित समान है। पुष्पिकायें भी गणितसारसंग्रह के समान हैं।

इन अध्यायों का पत्रानुसार विवरण निम्न है—

(१) संज्ञाधिकार	पत्र संख्या १–४
(२) परिकर्म व्यवहार	पत्र संख्या ४–१४
(३) कला सवर्ण व्यवहार	पत्र संख्या १४–२८
(४) प्रकीर्णक व्यवहार	पत्र संख्या २८–३४
(५) त्रैराशिक व्यवहार	पत्र संख्या ३४–३९
(६) वर्ग संकलितादि व्यवहार	पत्र संख्या ३९–४५

१. विस्तृत विवरण हेतु देखें सं०—३-II एवं III

२. यह परिकर्म व्यवहार का ही एक भाग है।

३. षट्त्रिंशिका की अन्य कृतियों में क्या स्थिति है। इसका निर्धारण अन्य प्रतियों के अध्ययन से ही किया जा सकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गणितसार संग्रह में छठाँ अध्याय मिश्रक व्यवहार प्रकरण है, जिसमें पंचराशिक, वृद्धि-विधान, विविध कुट्टीकार आदि है। जबकि चर्चित कृति में वर्ग संकलितादि व्यवहार है। इसमें निम्न १३ सूत्रों को उदाहरण सहित समझाया गया है—

(१) वर्ग संकलितानयन सूत्रं।
(२) धन संकलितानयन सूत्रं।
(३) एकवारादिसंकलितधनानयन सूत्रं।
(४) सर्वधनानयने सूत्रद्वयं।
(५) उत्तरोत्तरचयभवसंकलितधनानयन सूत्रं।
(६) उभयान्तादागत पुरुषद्वयसंयोगानयन सूत्रं।
(७) वणिक्करस्थितधनानयन सूत्रं।
(८) समुद्र मध्ये १-२-३।
(९) छेदोशशेष जातो करणसूत्रं।
(१०) करण सूत्र त्रयम्।
(११) गुणगुण्यमिश्रे सतिगुणगुण्यानयनसूत्रं।
(१२) बाहुकरणानयनसूत्रं।
(१३) व्यासाद्यानयनसूत्र।

उपरांत १ पत्र में संदृष्टि का विषय चर्चित है। "वर्ग संकलितादिनयनसूत्रं" नामक इस प्रकरण का प्रारम्भ निम्न प्रकार से हुआ है—

"श्री वीतरागाय नमः (६) छत्तीसमेतेन सकल ८, भिन्न ८, भिन्न जाति ६, प्रकीर्णक १०, त्रैराशिक ४, इंत्ता ३६ नू छत्तीस में बुट्टु वीराचार्यरुपेल्गणितवनु माधव चन्द्र त्रैवेद्याचार्यरू शोध सिदरामि शोध्य सार संग्रहमेनिसकोंबुट्टु। वर्ग संकलितानयन सूत्र"।

भावार्थ यह है—"म० जिनेन्द्र देव (तीर्थंकर) को नमस्कार है। इस छत्तीसी ग्रंथ में ८ परिकर्म, ८ परिकर्म भिन्नों पर, ६ भिन्न जातियां, १० प्रकीर्णक (भिन्नों पर आधारित प्रश्न), ४ त्रैराशिक इस प्रकार कुल ३६ विषयों की चर्चा है। विद्वान् (महा) वीराचार्य द्वारा पहले कहे गये (गणित) सारसंग्रह को शोध करके माधवचन्द्र त्रैविद्य ने इसकी रचना की। कन्नड़ शब्द, **पेल्हगणित**—कहे गये, बुन्टु—विद्वान्।

उपरांत पूर्व लिखित १३ सूत्रों की चर्चा के बाद अंक संदृष्टि के अन्तर्गत जैन साहित्य की परम्परा में बहुतायत से पाये जाने वाले ३४ के Magic Square का निर्माण किया गया है।

९	१६	२	७
६	३	१३	१२
१५	१०	८	१
४	५	११	१४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पूर्ण पांडुलिपि में अधिकांश पत्रों में उपयोगी टिप्पण पत्र के किनारों पर दिये गये हैं। कहीं-कहीं गणनायें देकर विषय को स्पष्ट किया गया है। पत्र संख्या ४४ के किनारे पर १५ का Magic Square दिया है। त्रिभुज का क्षेत्रफल निकालने के सन्दर्भ में △ का चित्र भी टिप्पणी में दिया गया है।

अन्तिम पत्र पर "इति षट्त्रिंशिका ग्रन्थ समाप्तः"। लिखने के उपरांत निम्न प्रशस्ति लिखी है—

"वि० संवत् १६६४ वर्षे असौज सुदी व गुरो श्री मूलसंघ सरस्वती गच्छ बलात्कार गणे श्री कुन्दकुन्दाचार्यान्वये भग० श्री पद्मनन्दिदेवा, तत्पट्टे १ ब्र० श्री सकलकीर्ति देवा, तत्पट्टे म० श्री भुवनकीर्ति देवा, तत्पट्टे म० श्रीज्ञान भूषण देवा, तत्पट्टे म० शुभ चन्द्र देवा, तत्पट्टे म० सुमतिकीर्ति देवा, तत्पट्टे म० श्री गुणकीर्ति देवा, तत्पट्टे वादिभूषण देवास्ताद गुरुभ्राता ब्र० श्री भीमा तत्शिष्य ब्र० मेघराज तत् शिष्य ब्र० केशव पठनार्थे ब्र० नेमदासस्येदं पुस्तकं।"

स्पष्टतः प्रशस्ति से रचयिता या रचनाकाल पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता है।

षट्त्रिंशिका के कृतित्व के संदर्भ में किसी अर्थमूलक परिणाम पर पहुँचने के लिए अन्य प्रतियों की खोज एवं उनका अध्ययन भी आवश्यक है। कारंजा भंडार प्रति–१ (छत्तीसी गणित) कारंजा के शास्त्र भंडार में (बलात्कारण मन्दिर-कारंजा) प्रतिक्रमांक ६३ पर छत्तीसी गणित ग्रन्थ सुरक्षित है।[1] ४९ पत्रों की इस प्रति के पत्रों का आकार ११.७५" × ५" है एवं प्रत्येक पत्र पर ११ पंक्तियां हैं। इस कृति का भी प्रारम्भ ६०, ॐ नमः सिद्धेभ्य", अलघ्यं त्रिजगत्सारं···आदि मंगलाचरण से हुआ है।

पुनः परिकर्म व्यवहार पत्र संख्या	१ से १५ तक
क्लासवर्ण व्यवहार पत्र संख्या	१५ से ३२ तक
प्रकीर्णक पत्र व्यवहार संख्या	३२ से ३६ तक
त्रैराशिक व्यवहार पत्र संख्या	३६ से ४२ तक

चर्चित है। इसके तत्काल बाद जयपुर प्रति के समान ही "श्री वीतरागाय नमः" (६) छत्तीसमेतेन सकल ८·····शोध्य सार संग्रह मेनिसिकों बुट्ट (वर्ग संकलितानयन सूत्रं) आदि विवरण है। पत्र संख्या ४२-४९ तक विविध विषयों को चर्चा है। अंतिम पृष्ठ ४९ पर लिखा है कि "धनं ३५ अंक संदृष्टिः छः" इति छत्तीसी गणित ग्रन्थ समाप्तः (छः छ) श्री शुभं भूयात सर्वेषां। संवत् १७०२ वर्षे भगसिरवदी ४ बु० संवत् १७०२ वर्षे माघ शुदि ३ शुक्ल श्री मूल संघे·····छत्तीसी गणितशास्त्र दत्तं श्रीरस्तु।[2]

षट्त्रिंशिका का अर्थ छत्तीस होता है अतः ऐसा प्रतीत होता है मानों ग्रन्थ के शीर्षक का हिन्दी अनुवाद कर दिया गया है। यह ग्रन्थ भी षट्त्रिंशिका ही है।

१. विवरण स्रोत-गणितसार संग्रह, हिन्दी संस्करण, परिशिष्ट, ५ पृ० ५५।

२. वही।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कारंजा भंडार—प्रति-२ (षट्त्रिंशतिका) कारंजा भंडार का प्रति क्रमांक ६५ पर सुरक्षित ग्रन्थ में कुल ५३ पत्र हैं। ११" × ४.७५" के आकार के प्रत्येक पत्र पर १० पंक्तियां हैं इस ग्रंथ में विविध अध्यायों का वर्गीकरण निम्नवत् है :—

परिकर्म व्यवहार पत्र संख्या	१ से १६ तक
कलासवर्ण व्यवहार पत्र संख्या	१६ से ३४ तक
प्रकीर्णक व्यवहार पत्र संख्या	३४ से ४० तक
त्रैराशिक व्यवहार पत्र संख्या	४० से ४६ तक
वर्ग संकलितादि व्यवहार पत्र संख्या	४६ से ५३ तक

"इति सार संग्रहे गणितशास्त्रे महावीराचार्यस्य कृतौ वर्ग संकलितादि व्यवहारः पंचमः समाप्तः।"

उपरान्त निम्न प्रकार प्रशस्ति लिखी है—

"संवत् १७२५ वर्ष कार्तिक सुदि १० भौमे श्री मूल संघे सरस्वती गच्छे बलात्कारगणे श्री कुन्दकुन्दाचार्यान्वये म० श्री सकल कीर्त्यन्वये भ० श्री वादिभूषण देवास्तत्पट्टे भ० श्री रामकीर्तिदेवास्तत्पट्टे म० श्री पद्मनन्दिदेवास्तत्पट्टे म० श्री देवेन्द्रकीर्ति गुरुपदेशात् मुनि श्री श्रुतिकीर्तिस्तच्छिष्य मुनि श्री देवकीर्तिस्तच्छिष्य आचार्य श्री कल्याणकीर्तिस्तच्छिष्यरूप मुनि श्री त्रिभुवनचदेणेदं षट् त्रिंशतिका गणितशास्त्रं कर्म क्षयार्थं लिखितं।"

प्रशस्ति से स्पष्ट है कि इस ग्रन्थ का नाम षट्त्रिंशतिका है एवं उपलब्ध विवरण से स्पष्ट है कि इसमें वर्ग संकलितादि व्यवहार में जयपुर प्रति के समान ही विषय सामग्री है। ग्रंथ का परिचय देते हुए गणितसारसंग्रह (हिन्दी संस्करण) के परिशिष्ट में परिशिष्टकार ने लिखा है "मानों यह माधवचन्द्र त्रैविद्य का विविध ग्रंथ हो।

उदयपुर प्रति :—उदयपुर में भी श्री दि० जैन बीसपंथी मन्दिर, मण्डी नाल में गणितसार संग्रह की अपूर्ण प्रति के नाम से एक पांडुलिपि सुरक्षित है। यह पांडुलिपि भी षट्त्रिंशिका ही है। क्योंकि ५३ पत्रों वाली इस प्रति के पत्र ४६ पर "श्री वीतरागाय नमः (६) छत्तीसमेतेन···संग्रह मेनिकोंबुटु। वर्ग संकलितानयन सूत्रं है एवं आगे का प्रकरण अन्य प्रतियों के समान है। इस प्रति का लेखनकाल श्रावण शुक्ला ५, शुक्रवार, संवत् १९०५ है।

षट्त्रिंशिका की मौलिकता एवं कृतित्व के निर्धारण के समय गणितसारसंग्रह के वर्तमान मुद्रित संस्करण की मूल प्राचीन पांडुलिपियों से इसका (षट्त्रिंशिका) तुलनात्मक अध्ययन अत्यंत आवश्यक है। गणितसारसंग्रह का वर्तमान संस्करण (हिन्दी एवं अंग्रेजी) निम्न पाँच पांडुलिपियों[1] के आधार पर तैयार किया गया है—

१. "P" यह प्रति Government Oriental Manuscript Lib., Madras में है इसमें मात्र ५ अध्याय हैं, साथ में संस्कृत टिप्पणियां भी हैं।

---

१. वही,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. "K" यह प्रति भी Government Oriental Manuscript Lib., Madras में ही है। इसमें भी ५ अध्याय हैं, साथ में कन्नड़ भाषा में टिप्पणियां दी गयी हैं।

३. "M" यह प्रति Government Oriental Manuscript Library, Mysore में है। इसे एक जैन पंडित की ताड़पत्रीय प्रति की प्रतिलिपि कराकर तैयार किया गया था। यह प्रति पूर्ण है तथा इसके साथ वल्लभ कृत कन्नड़ की संक्षिप्त टीका भी है।

४. "K" यह प्रति भी Government Oriental Manuscript Lib., Madras में ही है, इसमें मात्र ७ वां अध्याय है, साथ में कन्नड़ व्याख्या है। ज्यामितीय रचनाओं को चित्रों द्वारा समझाया गया है।

५. "B" यह प्रति जैन मठ—मूडबिद्री (दक्षिण कनारा) में है एवं पूर्ण है। इसमें कन्नड़ भाषा के प्रश्नों के माध्यम से विषय को स्पष्ट किया गया है।

डा० हीरालाल जैन ने कारंजा (अकोला) भण्डार में उपलब्ध गणितसारसंग्रह की कतिपय (७) प्रतियों की सूचना गणितसारसंग्रह के हिन्दी संस्करण के परिशिष्ट में दी है।[1] अं० नं० ६०, ६१,६२ एवं ६६ की प्रतियों के पत्रों की संख्या क्रमशः २०८, १९ एवं १५ है फलतः वे विशेष महत्त्व की नहीं है क्योंकि उनमें बहुत थोड़ा अंश है। हमारे विचार से प्रति "P" एवं "K" (५ अध्याय वाली) षट्त्रिंशिका के अध्ययन की दृष्टि से मूल्यवान हो सकती है। हमारे एक मित्र ने सूचित किया है कि कारंजा भंडार के वर्तमान सूची पत्र के अनुसार उसके क्रमांक ७०१, ७०५, ७०६ पर षट्त्रिंशिका की प्रतियाँ सुरक्षित हैं। ये ग्रन्थ बस्ता क्रमांक १३१ में उपलब्ध है।[2]

उपरोक्त सम्पूर्ण विवेचन से स्पष्ट है कि—

(१) षट्त्रिंशिका, षट्त्रिंशतिका एवं छत्तीसी गणित ये तीनों एक ही ग्रन्थ है। कारंजा भंडार की प्रतियों एवं (छत्तीसी गणित एवं षट्त्रिंशतिका) के उपलब्ध विवरण एवं जयपुर की षट्त्रिंशिका प्रति की तुलना करने से इनकी सामग्री में पूर्णतः साम्य दृष्टिगत होता है। कारंजा भंडार की प्रतियाँ मिलने पर पाठान्तर आदि लेकर निष्कर्ष की पुष्टि की जा सकेगी। पुनः त्रैराशिक व्यवहार तक के अंश (जो कि गणितसारसंग्रह से पूर्णतः उद्धृत हैं) में सकल ८, भिन्न ८, भिन्न जाति ६, प्रकीर्णक १०, एवं त्रैराशिक ४ इस प्रकार के कुल ३६ विषय ही चर्चित हैं अतः इन तीनों में एक ही अर्थ के बोधक शीर्षकों की सार्थकता भी सिद्ध होती है।

(२) इसकी रचना माधव चन्द्र त्रैविद्य नामक दिगम्बर जैनाचार्य ने महावीराचार्य के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ गणितसारसंग्रह को शोध कर की थी। यहाँ पर एक बात ध्यान देने योग्य है कि महावीराचार्य की कृति के रूप में छत्तीस पूर्वाप्रति उत्तर प्रतिसह का भी उल्लेख विद्वानों ने किया है।[3]

(३) डा० मुकुटबिहारी लाल अग्रवाल का कथन 'इसमें बीजगणित की ही चर्चा है' समीचीन नहीं लगता।

---

१. वही,

२. व्यक्तिगत पत्राचार-श्री श्रीकान्त चंवरे—अकोला।

३. देखें सं०—६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस निष्कर्ष के संदर्भ में यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि डा० अग्रवाल ने एक ओर तो लिखा है कि "गणितसारसंग्रह के अतिरिक्त षट्त्रिंशिका नामक पुस्तक का उल्लेख राजस्थान के जैन शास्त्रों के भण्डारों की ग्रन्थ सूची में मिलता है, वहीं उसी पैरा में आगे लिखते हैं कि "महावीराचार्य ने इसमें बीजगणित की ही चर्चा की है" स्पष्ट है कि डा० अग्रवाल ने प्रति नहीं देखी थी। कासलीवाल जी को (वे गणित विद्वान् नहीं हैं) पुष्पिकाओं से बार-बार "महावीराचार्यस्य-कृतो.....।" आदि आने के कारण महावीराचार्य की कृति होने की भ्रांति हो गयी तो अग्रवाल ने गणितसारसंग्रह में अंकगणित एवं क्षेत्रगणित के विषय होने एवं उनकी एक अन्य कृति ज्योतिष-पटल का उल्लेख मिलने के कारण शेष बचे (उस काल की परम्परा के अनुरूप) विषय को इसमें निहित मान लिया।

भारतीय गणित के स्वर्ण युग के गणितज्ञों में माधव चन्द्र त्रैविद्य का नाम इस कृति के प्रकाश में आने से अभिन्न रूप से जुड़ गया है। आशा है कि इस कृति का अनुवाद एवं तुलनात्मक अध्ययन मध्यकालीन गणित की प्रकृति को समझने के साथ ही महावीराचार्य के गणित को समझने में भी सहायक होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ एवं लेख

1. Agrawa, M. B. Lal— I महावीराचार्य की जैन गणित को देन, जैन सिद्धान्त भास्कर, (आरा), २४, १९६४, पृ० ४२-४७

II गणित एवं ज्योतिष के विकास में जैनाचार्यों का योगदान, शोधप्रबन्ध, आगरा वि० वि०, १९७२, पृ० ३७७

2. Gupta, R. C. — Mahāvīrācārya on the perimeter & Area of Ellipse, M. E. (Shiwan) I (B), 1974, pp. 17-20

3. Jain, Anupam — I कतिपय अज्ञात जैन गणित ग्रन्थ, गणित भारती (दिल्ली), ४ (१,२) १९८२, पृ० ६१-७१

II महावीराचार्य, दि० जैन त्रिलोक शोध संस्थान, हस्तिनापुर, १९८४

III Mahāvīrācārya, The men & the mathematician, due for Publication Acta Ciencia Indica

4. Jain, J. P. — राष्ट्रकूट युग का जैन साहित्य सम्वर्द्धन में योगदान, सिद्धान्ताचार्य पं० कैलाश चन्द्र अभि० ग्रन्थ, रीवा, १९८० पृ० २७३-२८०

5. Jain, L. C. — महावीराचार्य कृत गणित सार संग्रह, प्रस्तावना परिशिष्ट एवं टिप्पण सहित सम्पादित, जैन संस्कृति संरक्षक संघ, शोलापुर, १९६३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

6. Jain, N. C. — I भारतीय ज्योतिष का पोषक जैन ज्योतिष, वर्णी अभि० ग्रन्थ, सागर, १९५०, पृ० ४६९-४८४
II तीर्थंकर महावीर एवं उनकी आचार्य परम्परा—३, भा० दि० जैन विद्वत् परिषद्, सागर, १९७४

7. Jain, Parmanand — जैन धर्म का प्राचीन इतिहास, भाग—२, दिल्ली, १९७४

8. Kasliwal, K. C.— राजस्थान के शास्त्र भण्डारों की ग्रन्थ सूची—भाग ३ श्री महावीर जी (राजस्थान)

9. Sen, S. N (with — Bag A. K & Rav. R.) Bibliography of Samskrita works on Astronomy & Mathematics, I. N. S. A. New Delhi, 1966

10. Shah, A. L. — जैन साहित्य का बृहद् इतिहास—भाग ५ पा० वि० शोध संस्थान, वाराणसी, १९६९।

●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org